

भारत का माननीय सर्वोच्च न्यायालय
आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार
आपराधिक अपील क्रमांक 349/2019

मध्यप्रदेश शासन

..... अपीलार्थी

बनाम

लक्ष्मीनारायन और अन्य

..... प्रत्यर्थीगण

साथ में आपराधिक अपील क्रमांक 350/2019

निर्णय

न्यायमूर्ति ए. आर. शाह

आपराधिक अपील क्रमांक 349/2019

इस न्यायालय के दो न्यायाधीश की पीठ के आदेश दिनांक 08.09.2017, को नरिन्दर सिंह बनाम पंजाब (2014) 6 SSC 466 और राजस्थान राज्य बनाम शम्भू केवट (2014) 4 SSC 149 इस न्यायालय के दो निर्णयों के बीच उत्पन्न दृश्यमान विरोधाभास के कारण यह मामला तीन न्यायामूर्तियों की पीठ को भेजा गया है और इस प्रकार प्रकरण तीन न्यायामूर्तियों की पीठ के समक्ष प्रस्तुत है।

1.1 आदेश दिनांक 19.11.2018 में चूंकि विधि का एक ही प्रश्न शामिल है, इस न्यायालय ने सम्बंधित अपील को मुख्य अपील के साथ संलग्न किया है।

2. म.प्र. शासन ने यह वर्तमान अपील म.प्र. उच्च न्यायालय के विविध आपराधिक प्रकरण क्रं 8000/2013 में पारित आदेश दिनांक 07.10.13 क्षुब्ध एवं असन्तुष्ट होकर पेश की है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी/ मूल अभियुक्त (तदुपरान्त अभियुक्त के रूप में सन्दर्भित किया जायेगा) द्वारा पेश की गई उक्त आवेदन को उच्च न्यायालय ने मंजूर किया है और दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 की शक्तियों का प्रयोग करते हुए, शिजी उर्फ पप्पू और अन्य

बनाम राधिका और एक अन्य के निर्णय पर अभिलम्ब करते हुए धारा 307 और 34 भारतीय दण्ड संहिता से दण्डनीय अपराध की कार्यवाहियों को रद्द कर दिया है।

2.1 कार्यालय प्रतिवेदन दिनांक 18.08.2017 इंगित करती है कि कारण बताओं सूचना प्रतिवादिगण पर हो चुंकि है और प्रतिवादी क्रं0 1 से 3 तक का प्रतिनिधित्व सुश्री मृदुला राय भारद्वाज अधिवक्ता द्वारा किया जाता है लेकिन सुनवाई के दौरान, प्रतिवादिगण की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ।

3. इस अपील के प्रमुख तथ्य यह है, कि एक ए.आई.आर. प्रतिवादियों और अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध पुलिस थाना राऊ, जिला भिण्ड में धारा 307 और 34 भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत दण्डनीय अपराध के लिए दर्ज की गई थी, जो कि अपराध क्रं0 36/13 के रूप में दर्ज की गई थी। यह आरोप लगाया था कि दिनांक 03.03.2013 के लगभग 9 : 30 बजे, शिकायतकर्ता चरणसिंह जो एलएनटी मशीन के संचालक है, सिंध नदी की रेत को इंदूकी रेत खदान में से निकाल रहे हैं और उसी समय नदी के दूसरी ओर से गोलीबारी शुरू हुई और इस तरफ से भी जबकि गोलीबादी शुरू हुई तो उसने सुना कि अपनी मशीन को यहां से ले जाओ। यह भी आरोप है कि कुछ लोग वहां आये, जिनमें संजीव (प्रतिवादी क्रं0 2 यंहा), लचर (प्रतिवादी क्रं0 2 यंहा), संतसिंह (प्रतिवादी क्रं0 3 यंहा), और दो अज्ञात व्यक्ति फरियादी के पास आये और उसकी मशीन तथा उसे भाग जाने को कहा, फिर किसी के संजीव (प्रतिवादी क्रं0 2 यंहा), को गोलीबारी करने को कहा फिर संजीव ने फरियादी पर गोली चलाई और फिर वे भाग गए। फरियादी मशीन से गीर गया। गोली फरियादी के दाहिने हाथ की कोहनी पर लगी। किसी तरह फरियादी गांव पहुंचने में सफल रहा और एक व्यक्ति ने एक कार बुलाई और फरियादी को जिला अस्पताल में भर्ती कराया।

3.1 कि दिनांक 04.03.2013 को जिला अस्पताल में ड्यूटी डाक्टर ने पुलिस को सूचित किया और फरियादी के बयान के आधार पर एक देहाती नालिसी क्रं0 0/13 भारतीय दण्ड संहिता की धारा 307 व 34 के तहत दर्ज की गई।

3.2 कि आहत फरियादी का मेडिकल परीक्षण जिला अस्पताल में किया गया और उसके शरीर पर पाँच चोटों के निशान पाए गए और चोट क्रं0 1 से 4 आग्नेयशस्त्र से कारित की जाने की राय दी थी और चोट क्रं0 5 के लिए एक्स-रे की सलाह दी गई थी।

3.3 कि दिनांक 05.03.2013, पुलिस मौके पर पहुंची और नक्शा मौका तैयार किया ; धारा 161 द.प्र.सं. के तहत साक्षियों के कथन अभिलिखित किये गए और पुलिस ने घटना स्थल से

साधारण मिट्टी, खून आलूदा मिट्टी और अन्य वस्तुएं जब्त की और उनके जब्ती पत्रक तैयार किये।

3.4 कि अभियुक्त ने विविध आपराधिक प्रकरण क्रं0 8000/2013 द.प्र.स की धारा 482 के अन्तर्गत मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय, खण्डपीठ ग्वालियर में, एफ.आई.आर से उत्पन्न आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करने हेतु दायर किया, एकमात्र इस आधार पर कि फरियादी और ओरोपी के मध्य समझौता हो गया है।

4. कि आलोच्य निर्णय और आदेश से, उच्च न्यायालय ने द.प्र.सं. की धारा 482 के तहत अपनी शक्तियों के प्रयोग में, अभियुक्त के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही को केवल इस आधार पर रद्द कर दिया कि अभियुक्त व फरियादी के विवादों का निपटारा सौहार्दपूर्ण कर लिया है। आरोपियों के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करते हुए, उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के निर्णय पर शिजी के मामले में (उपरोक्त) विचार किया और भरोसा किया है।

5. अभियुक्त के विरुद्ध भा.द.सं की धारा 307 और 34 के दण्डनीय अपराधों की आपराधिक कार्यवाहियों को खारिजी के आलोच्य निर्णय और आदेश से क्षुब्ध और असंतुष्ट होकर मध्यप्रदेश शासन ने प्रस्तुत अपील पेश की है।

6. मध्यप्रदेश शासन की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार तरीके से निवेदन किया कि उच्च न्यायालय ने एफ.आई.आर को रद्द करने में गंभीर त्रुटि की है जो कि धारा 307 और 34 भा.द.सं. के अंतर्गत दण्डनीय अपराध था।

6.1 अपीलार्थी राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के जोरदार तरीके से यह निवेदन किया कि वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने एफ.आई.आर को यांत्रिक रूप से रद्द कर दिया है और एकमात्र इस आधार पर कि फरियादी व अभियुक्त के मध्य निपटारा/समझौता हो गया है, यहां तक कि आरोपीगण के विरुद्ध आरोपित अपराधों की गंभीरता पर विचार किये बिना हुआ है।

6.2 अपीलार्थी राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह निवेदन किया कि धारा 482 द.प्र.सं. के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए और एफ.आई.आर. रद्द करते हुए, उच्च न्यायालय ने तथ्यों पर पूर्णतया विचार नहीं किया कि आरोपित अपराध बड़े पैमाने पर समाज के विरुद्ध थे और दो व्यक्तियों के व्यक्तिगत झगड़े तक सीमित नहीं थे।

6.3 अपीलार्थी राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह निवेदन किया कि एफ.आई.आर को रद्द करते समय उच्च न्यायालय ने शिजी (उपरोक्त) के निर्णय को पढ़ने में

भूल कि है। विद्वान अधिवक्ता के जोरदार तरीके से यह निवेदन किया कि उच्च न्यायालय को सराहना की जानी चाहिए थी, कि उन सभी मामलों में जिनमें फरियादी ने समझौता कर लिया है और/या अभियुक्त के साथ निपटारा में उतर चुका है, जरूरी नहीं कि इसका मतलब यह है कि इसके परिणाम स्वरूप दोषसिद्धि का कोई अवसर न हो या विचारण की सम्पूर्ण कार्यवाही निरर्थक हो। अपीलार्थी राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह जोरदार निवेदन किया कि प्रस्तुत मामले में इसके बावजूद विचारण में अभियुक्त के साथ हुए समझौते एवं निपटारे को दृष्टिगत रखते हुए भविष्य में फरियादी समर्थन नहीं कर सकेगा, तब भी अभियोजन अन्य साक्षियों का परीक्षण कराके यदि कोई हो, और/या चिकित्सीय साक्ष्य के आधार पर और/या अन्य साक्ष्य/या सामग्री से मामले को अभियुक्तगण के विरुद्ध साबित कर सकेगा, यह निवेदन किया जाता है कि वर्तमान मामलों में अन्वेषण जारी था और यहां तक कि साक्षियों के कथन भी दर्ज किये गये थे और चिकित्सीय साक्ष्य भी एकत्रित किये गये थे। यह भी निवेदन किया जाता है कि इसलिए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय ने शिजी के मामले के निर्णय पर विचार करने और भरोसा करने में स्पष्ट रूप से गलती की है।

6.4 अपीलार्थी राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह निवेदन किया कि अभियुक्तगण खतरनाक अपराधी थे और उनके विरुद्ध कई आपराधिक मामले दर्ज किये गये थे और वे समाज के लिए एक गंभीर खतरा हैं। यह निवेदन किया जाता है कि इन सभी उपरोक्त परिस्थितियों और अभियुक्त के आचरण को उच्च न्यायालय द्वारा अपनी धारा 482 द.प्र.सं. के अंतर्गत अपनी निहित शक्तियों के उपयोग में एफ.आई.आर को रद्द करते समय विचार किया जाना आवश्यक था, और विशेष रूप से तब जब कथित अपराध बड़े पैमाने पर समाज के विरुद्ध थे जैसे हत्या का प्रयास जो कि अशमनीय अपराध है। उसके निवेदन के समर्थन में अपीलार्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के निर्णयों, ज्ञान सिंह बनाम पंजाब राज्य (2012) 10 एस.सी.सी. 303; राजस्थान राज्य बनाम शम्भू केवट, (2014) 4 एस.सी.सी. 149; मध्यप्रदेश राज्य बनाम दीपक (2014) 10 एस.सी.सी. 285; मध्यप्रदेश राज्य बनाम मनीष (2015) 8 एस.सी.सी. 307; जे. रमेश कामठ बनाम मोहाना कुरूप (2016) 12 एस.सी.सी. 179; मध्यप्रदेश राज्य बनाम राजवीर सिंह (2016) 12 एस.सी.सी. 471; परबतभाई अहिर बनाम गुजरात राज्य (2017) 9 एस.सी.सी. 641; और 2019 एस.सी.सी. ऑनलाईन एस.सी. 7, मध्यप्रदेश राज्य बनाम कल्याण सिंह, आपराधिक अपील नं. 14/2019 दिनांक 4.1.2019 को निर्णित,

मध्यप्रदेश राज्य बनाम ध्रुव गुर्जर, आपराधिक अपील @ एस.एल.पी (आपराधिक) नं. 9859/2013 दिनांक 22.02.2019 को निर्णित इन निर्णयों पर भरोसा किया है।

6.5 उपरोक्त निवेदन करते हुए और उपरोक्त वर्णित न्याय निर्णयों पर भरोसा करते हुए अपीलार्थी राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत अपील को मजूर किये जाने और धारा 482 की अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा प्रथम सूचना रिपोर्ट को खारिज एवं अपास्त करने का आलोच्य निर्णय एवं आदेश को रद्द करने का निवेदन किया।

7. जैसा कि यहां बताया गया है, कि आरोपी प्रत्यर्थी की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ।

8. हमने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता को काफी समय तक सुना है।

9. आरंभ में यह ध्यान देना आवश्यक है कि वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने द.प्र.सं. की धारा 482 की अपनी शक्तियों का उपयोग करते हुए केवल फरियादी एवं अभियुक्त के मध्य समझौता हो जाने के आधार पर धारा 307 और 34 भा.द.सं. के तहत अपराधों की प्रथम सूचना रिपोर्ट को रद्द किया है। कि समझौते को ध्यान में रखते हुए और फरियादी द्वारा लिये गये पक्ष, इस न्यायालय के शिजी के मामले के निर्णय पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय का मानना है कि आरोपीगण के विरुद्ध दोषसिद्धी करने का कोई अवसर नहीं है और सम्पूर्ण विचारण करना निरर्थक होगा, उच्च न्यायालय ने एफ.आई.आर. को रद्द किया है।

9.1 यद्यपि, उच्च न्यायालय ने इस तथ्य पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है कि अभिकथित अपराध धारा 320 द.प्र.सं. के अनुसार अशमनीय थे। आलोच्य निर्णय से ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने सुसंगत तथ्यों तथा मामले की परिस्थितियों जिसमें विशेष रूप से अपराधों की गंभीरता और इसके सामाजिक प्रभाव पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश और आलोच्य निर्णय से ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने धारा 482 द.प्र.सं. के अंतर्गत शक्तियों के प्रयोग में एफ.आई.आर. को यांत्रिक रूप से रद्द किया है। उच्च न्यायालय ने व्यक्तिगत और निजी दोष के बीच अंतर तथा सामाजिक दोष और सामाजिक प्रभाव पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है। जैसा कि इस न्यायालय ने महाराष्ट्र राज्य बनाम विक्रम अनंतराय दोशी, (2014) 15 एस.सी.सी. 29, इस मामले में अवलोकन किया, धारा 482 द.प्र.सं. के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते हुए आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करते हुए न्यायालय का प्रमुख कर्तव्य होना चाहिए कि वह सारे तथ्यों का विश्लेषण कर आरोपो

के रुझान और समझौता के मर्म का पता करे । जैसा कि देखा गया है, यह न्यायाधीश का अनुभव है जो उसकी सहायता के लिए आता है और उक्त अनुभव का उपयोग सावधानी, सतर्कता, एहतियात और साहसी विवेक के साथ करना चाहिए। वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने उचित परिप्रेक्ष्य में सभी तथ्यों का विश्लेषण करने का तनिक भी कष्ट नहीं किया है और आपराधिक कार्यवाहियां यांत्रिक रूप से रद्द कर दी है। यहां तक कि वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय द्वारा धारा 482 द.प्र.सं. के तहत शक्तियों का प्रयोग करना और धारा 307 तथा 34 भा.द.सं. के तहत दण्डनीय अपराध की एफ.आई.आर. को रद्द करना, एक प्रकार से इस न्यायालय के निर्णयों द्वारा प्रतिपादित विधि के प्रतिकूल है।

9.2 ज्ञान सिंह (उपरोक्त) मामले के खण्ड-61 में इस न्यायालय ने महसूस किया और निम्न अनुसार प्रतिपादित किया :-

“61. उपरोक्त चर्चा से जो स्थिति बनती है उसे इस प्रकार संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है : उच्च न्यायालय को आपराधिक कार्यवाही या एफ.आई.आर. या परिवाद को रद्द करने की शक्तियां अपनी अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए और आपराधिक न्यायालय को दी गई धारा 320 के तहत अपराध को शमन करने की शक्ति से भिन्न है। अंतर्निहित शक्तियां व्यापक स्तर पर बिना किसी वैधानिक सीमा के साथ होती है लेकिन इस शक्ति को पैवंद दिशा निर्देशों के अनुसार ऐसे प्रयोग करना चाहिए : (i) न्याय के हितों की सुरक्षा हेतु, या (ii) किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने हेतु । किन मामलों में आपराधिक कार्यवाही या परिवाद या एफ.आई.आर. को रद्द करने की शक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है, जहां अपराधी और पीड़ित ने अपना विवाद सुलझा लिया है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और कोई श्रेणी विहित नहीं की जा सकती है। यद्यपि, इस प्रकार की शक्ति का प्रयोग करने से पहले उच्च न्यायालय को अपराध की प्रकृति और गंभीरता के बारे में यथोचित ध्यान होना ही चाहिए । जघन्य और मानसिक अवसाद के गंभीर अपराधों या हत्या, बलात्कार, डकैती इत्यादि जैसे अपराधों को रद्द नहीं किया जा सकता है यहां तक कि पीड़ित या पीड़ित के परिवार और अभियुक्त ने विवाद को सुलझा लिया है। इस प्रकार के अपराध प्रकृति में निजी नहीं है और समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं। इसी प्रकार, पीड़ित और अपराधी के बीच विशेष कानून के तहत अपराधों के संबंध में कोई समझौता जैसे कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम या उस क्षमता में काम करते समय लोक

सेवकों द्वारा किए गए अपराध आदि; ऐसे अपराधों को शामिल करने वाली आपराधिक कार्यवाही को रोकने के लिए कोई आधार प्रदान नहीं कर सकता है। लेकिन आपराधिक मामलों में बड़े पैमाने पर और पूर्वव्यापी दीवानी प्रकृति से खारिजी के उद्देश्यों के लिए अलग-अलग आधार पर खड़े होते हैं, विशेष रूप से वाणिज्यिक, वित्तीय, व्यापारिक, दीवानी, साझेदारी या इस तरह के सम्यव्यवहार या दहेज संबंधित वैवाहिक आदि संबंधित से उत्पन्न अपराधों या पारिवारिक विवाद जहां मूल रूप से दोष व्यक्तिगत या निजी प्रकृति का है और पक्षकारों ने अपने संपूर्ण मामले को हल कर लिया है। इस श्रेणी के मामलों में, उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द कर सकता है यदि उसके विचार में, अपराधी और पीड़ित के बीच समझौता होने के कारण, दोषी होने की संभावना दूरस्थ और धूमिल है और आपराधिक मामलों की निरंतरता अभियुक्त को गंभीर उत्पीड़न और प्रतिकूलता में डालेगी और पीड़ित के साथ समझौता पूर्ण और समपूर्ण निपटारा होते हुए भी आपराधिक मामले को रद्द न करके उसके साथ गंभीर अन्याय कारित होगा। दूसरे शब्दों में, उच्च न्यायालय को इस बात पर विचार अवश्य करना चाहिए कि क्या यह न्याय के हित के लिए अनुचित या न्यायसंगत होगा या आपराधिक कार्यवाही जारी रखने के लिए या पीड़ित तथा दोषकर्ता के बीच समझौता होने के बावजूद आपराधिक कार्यवाही जारी रखने से कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा और क्या न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करने हेतु, यह उचित है कि आपराधिक मामले को समाप्त कर दिया जाए और यदि उपरोक्त प्रश्न का उत्तर सकारात्मक है, तो उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के अपने क्षेत्र अधिकार में होगा।

9.3 ज्ञान सिंह (उपरोक्त), के मामले के निर्णय के विचार करने के बाद नरेंद्र सिंह बनाम पंजाब राज्य (2014) 6 एस.सी.सी. 466 के मामले के पैराग्राफ 29 में, इस न्यायालय ने निम्न रूप से अभिव्यक्त किया :

“29 . उपरोक्त चर्चा को दृष्टिगत रखते हुए, हम सरांशता और निम्नलिखित सिद्धांतों को प्रतिपादित करते हैं जिसके द्वारा उच्च न्यायालय को मार्गदर्शित किया जाएगा पक्षकारों के मध्य हुए समझौते को उचित उपचार देने में और धारा 482 द.प्र.सं. के अंतर्गत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए कार्यवाही को रद्द करते हुए और समझौते को स्वीकार करते हुए या समझौते को मानने से इनकार करते हुए आपराधिक कार्यवाहियों के जारी रहने का निर्देश देगा।

29.1. द.प्र.सं. की धारा 482 के तहत प्रदत्त शक्ति को उस शक्ति से अलग किया जाना चाहिए जो न्यायालय को संहिता की धारा 320 के अंतर्गत अपराधों के शमन करने के लिए दी जाती है। निसंदेह संहिता की धारा 482 के अंतर्गत उच्च न्यायालय को उन मामलों में भी आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करने की अंतर्निहित शक्ति है जो शमनीय नहीं हैं, जहां पक्षकारों ने आपस में मामला सुलझा लिया है। हालांकि, इस शक्ति का प्रयोग संयम से और सावधानी के साथ किया जाना है।

29.2. जब पक्षकार निपटारे पर पहुंच गए हैं और उस आधार पर आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए याचिका दायर की जाती है, तो ऐसे मामलों में मार्गदर्शक कारक (i) न्याय के उद्देश्य की पूर्ति के लिए या (ii) किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोकने के लिए को सुरक्षित करना होगा।

उच्च न्यायालय को अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय पूर्वोक्त दो उद्देश्यों में से किसी एक पर राय बनानी होती है।

29.3. ऐसी शक्ति का उन अभियोगों में प्रयोग नहीं किया जाना है जिनमें जघन्य और मानसिक अवसाद के गंभीर अपराध या अपराध जैसे हत्या, बलात्कार, डकैती इत्यादि शामिल हैं। ऐसे अपराध निजी प्रकृति के नहीं हैं और समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं। इसी प्रकार विशेष कानून के तहत कारित किये गए अभिकथित अपराध जैसे कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम या उस क्षमता में काम करते समय लोक सेवकों द्वारा किए गए अपराध मात्र इस आधार पर रद्द नहीं किये जाने हैं कि पीड़ित और अपराधी के बीच कोई समझौता हो गया है।

29.4. दूसरी तरफ, उन आपराधिक मामलों में जो बड़े पैमाने पर और पूर्वव्यापी दीवानी प्रकृति के होते हैं, विशेष रूप से वे जो वाणिज्यिक संव्यवहार से उत्पन्न होते हैं या वैवाहिक संबंध से उत्पन्न होते हैं, या पारिवारिक विवादों को समाप्त किया जाना चाहिए, जब पक्षकारों ने अपने विवाद को आपस में खुद से हल कर लिया हो।

29.5. अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को इस बात की जांच करनी है कि क्या दोषसिद्धि की संभावना दूरस्थ और धूमिल है और आपराधिक मामलों की निरंतरता अभियुक्तों को बहुत उत्पीड़न और पक्षपात में डालेगी और आपराधिक मामलों को समाप्त नहीं करने से उसके साथ अत्यधिक अन्याय होगा।

29.6. भा.द.सं. की धारा 307 के तहत अपराध जघन्य और गंभीर अपराधों की श्रेणी में आयेगें और इसलिए इन्हें आमतौर पर समाज के विरुद्ध अपराध माना जाता है और न कि केवल अकेले व्यक्ति के विरुद्ध। हांलाकि उच्च न्यायालय अपने निर्णय को केवल इसलिए बहाल नहीं करेगा क्योंकि एफ.आई.आर. में धारा 307 भा.द.सं. का उल्लेख है या इस प्रावधान के तहत आरोप तय किया गया है। उच्च न्यायालय को यह परीक्षण करने के लिए खुला रहेगा कि क्या धारा 307 भा.द.सं. को मात्र इसमें शामिल करने के लिए या अभियोजन पक्ष ने पर्याप्त साक्ष्य एकत्र किये हैं, जो यदि साबित हुआ, को धारा 307 भा.द.सं. के तहत आरोप साबित करने के लिए प्रेरित करेगा। इस प्रयोजन के लिए, उच्च न्यायालय को यह खुला रहेगा, चोट लगने की प्रकृति के साथ जाए क्या इस तरह की चोट शरीर के महत्वपूर्ण/प्रतिनिधि भागों पर कारित की गई है, हथियारों की प्रकृति जो इस्तेमाल किये गये हैं, पीड़ित को कारित चोटों के संबंध में चिकित्सीय रिपोर्ट सामान्यतः मार्गदर्शक कारक हो सकते हैं। इस प्रथम दृष्टया विश्लेषण के आधार पर, उच्च न्यायालय इस बात की जांच कर सकता है कि क्या दोषी ठहराए जाने की प्रबल संभावना है या दोषी ठहराए जाने की संभावनाएँ दुरस्थ और धूमिल हैं। पूर्व मामले में यह निपटारे को स्वीकार करने से इनकार कर सकता है और आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द कर सकता है जबकि बाद के मामले में उच्च न्यायालय के लिए पक्षकारों के बीच पूर्ण निपटारा अभिवाक् समझौते पर आधारित अपराध को स्वीकार करने के लिए यह स्वीकार्य होगा। इस स्तर पर, न्यायालय को इस तथ्य से भी प्रभावित किया जा सकता है कि पक्षकारों के बीच समझौता करने से उनके बीच सदभाव हो सकता है जिससे उनके भविष्य के रिश्ते में सुधार हो सकता है।

29.7. संहिता की धारा 482 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करना है या नहीं, यह तय करते समय निपटारे की समय-सीमा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जिन मामलों का निपटारा कथित अपराध के तुरन्त बाद हो जाता है और मामला अन्वेषणाधीन है, उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाही/जांच को रद्द करने के लिए समझौता स्वीकार करने में उदार हो सकता है। यह इस कारण से है कि इस स्तर पर जांच अभी भी जारी है और यहां तक की चार्जशीट भी पेश नहीं की गई है। इसी तरह, उन मामलों में जहां आरोप लगाया गया है लेकिन साक्ष्य को शुरू करना अभी बाकी है या साक्ष्य अभी भी प्रारंभिक अवस्था में है, उच्च न्यायालय अपनी शक्तियों को अनुकूल

तरीके से उपयोग करने में उदारता दिखा सकता है, लेकिन ऊपर उल्लेखित परिस्थितियों/सामग्री का प्रथम दृष्टया मूल्यांकन करने के बाद। दूसरी ओर, जहां अभियोजन साक्ष्य लगभग पूर्ण हैं या प्रकरण साक्ष्य के निष्कर्ष के बाद तर्क की अवस्था पर है, आमतौर पर उच्च न्यायालय को संहिता की धारा 482 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने से बचना चाहिए, जैसा कि ऐसे मामलों में विचारण न्यायालय मामले को गुणागूण पर निर्णित करने की स्थिति में होगा और इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि क्या धारा 307 के तहत अपराध किया गया है या नहीं। इसी तरह, उन मामलों में जहां दोषसिद्धि विचारण न्यायालय द्वारा पहले से ही दर्ज की जाती है और मामला उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की अवस्था पर है, केवल पक्षकारों के बीच समझौता एक ही आधार को स्वीकार करने का आधार नहीं होगा जिसके परिणाम स्वरूप अपराधी को दोषमुक्त किया जायेगा जो कि विचारण न्यायालय द्वारा पहले से ही दोषसिद्ध किया गया है। यहां धारा 307 भा.द.सं. के तहत आरोप साबित हो जाता है और दोषसिद्धि पहले से ही जघन्य अपराध के रूप में दर्ज की जाती है और इसलिए, इस तरह के अपराध के लिए दोषी पाए गए अपराधी को बख्शने का कोई सवाल ही नहीं है।

9.4 परबतभाई अहीर (उपरोक्त) के मामले में, न्यायालय के पास फिर से इस पर विचार करने का अवसर है कि क्या उच्च न्यायालय द.प्र.सं. की धारा 482 के तहत अंतर्निहित क्षेत्राधिकार के उपयोग में एफ.आई.आर./परिवाद/आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द कर सकता है, इस बिंदु पर इस न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नलिखित प्रस्तावों को संक्षेप में प्रस्तुत किया :

- (1) द.प्र.सं. की धारा 482 उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों को संरक्षित करता है कि किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोकने के लिए या न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए । यह प्रावधान नई शक्तियों को प्रदान नहीं करता है। यह केवल उन शक्तियों को मान्यता देता है और संरक्षित करता है जो उच्च न्यायालय में अंतर्निहित है।
- (2) उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार का आह्वान प्रथम सूचना रिपोर्ट या आपराधिक कार्यवाही को इस आधार पर रद्द करने के लिए कि अपराधी और पीड़ित के बीच समझौता हो गया है, एक समान नहीं है जहां क्षेत्राधिकार का आह्वान अपराध के शमन करने के उद्देश्य से किया जाता है। अपराध का शमन करते समय, न्यायालय

की शक्ति द.प्र.सं. की धारा 320 के प्रावधानों के द्वारा शासित होती है। धारा 482 के तहत रद्द करने की शक्ति आर्कषित होती है चाहे अपराध अशमनीय हो।

- (3) एक राय बनाने में कि क्या धारा 482 द.प्र.सं. के तहत अपने अधिकार क्षेत्र के उपयोग में एक आपराधिक कार्यवाही या परिवाद को रद्द किया जाना चाहिए, उच्च न्यायालय को यह मूल्यांकन करना चाहिए कि क्या न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति में निहित शक्ति का प्रयोग किया जाना उचित होगा।
- (4) जबकि उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति की व्यापक परिधि और पूर्णता है, इसे प्रयोग करने की आवश्यकता है (i) न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए, या (ii) किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए।
- (5) इस निर्णय में कि क्या परिवाद या प्रथम सूचना रिपोर्ट को इस आधार पर खारिज किया जाना चाहिए कि अपराधी और पीड़ित ने विवाद को निपटा लिया है, अंततः प्रत्येक मामला उसके तथ्यों और परिस्थितियों पर घुमता है और सिद्धांतों का कोई विस्तृत विस्तार तैयार नहीं किया जा सकता है।
- (6) धारा 482 के तहत शक्ति के प्रयोग में और इस अभिवाक् से निपटाने के दौरान कि विवाद सुलझा लिया गया है, उच्च न्यायालय को अपराध की प्रकृति और गंभीरता का सम्यक ध्यान रखना चाहिए। जघन्य और गंभीर अपराधों जिनमें मानसिक अवसाद या अपराध जैसे हत्या, बलात्कार, डकैती शामिल है को उचित रूप से समाप्त नहीं किया जा सकता यद्यपि पीड़ित या पीड़ित के परिवार ने विवाद को सुलझा लिया है। ऐसे अपराध वास्तव में निजी प्रकृति के नहीं हैं बल्कि समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं ऐसे मामलों में मुकदमें को जारी रखने का निर्णय गंभीर अपराधों के लिए व्यक्तियों को दण्डित करने में लोगहित के अवरोही तत्व पर स्थापित किया गया है।
- (7) गंभीर अपराधों से अलग, ऐसे अपराधिक मामले हो सकते हैं जिनमें किसी सिविल विवाद का भारी या प्रमुख तत्व होता है। जहां तक कि रद्द करने की अंतर्निहित शक्ति के प्रयोग से संबंधित है, वे अलग-अलग पायदान पर खड़े होते हैं।
- (8) आपराधिक मामले जो वाणिज्यिक, वित्तीय, व्यापारिक, साझेदारी या समान संव्यवहार जो अनिवार्य रूप से सिविल प्रकृति के साथ उत्पन्न होते हैं, वे रद्द करने

के लिए उपयुक्त परिस्थितियों में आ सकते हैं जहां पक्षकारों ने विवाद सुलझा लिया हो।

(9) ऐसे मामले में उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाही को रद्द कर सकता है यदि विवादियों के बीच समझौते को ध्यान में रखते हुए, दोषसिद्धि की संभावना काफी दुरस्थ है और आपराधिक कार्यवाही की निरंतरता उत्पीड़न और प्रतिकूलता कारित करेगा; और

(10) उपरोक्त प्रस्ताव 8 और 9 में निर्धारित सिद्धांत का एक अपवाद है। आर्थिक अपराधों में राज्य का आर्थिक और वित्तीय हित निहित होता है जो कि निजी विवादियों के बीच मामले की परिधि से परे प्रभाव होता है। उच्च न्यायालय के लिए कार्यवाही को रद्द करने से मना करना उचित होगा जहां अभियुक्त वित्तीय या आर्थिक कपट या कदाचार से संबंधित गतिविधि में लिप्त है। शिकायत किये गए कृत्य के परिणाम को वित्तीय या आर्थिक प्रणाली के संतुलन में तोलना होगा।

9.5 मनीष (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय ने विशेष रूप से अवलोकन और अभिनिर्धारित किया कि, जब धारा 307, 294 और 34 भा.द.सं. के अन्तर्गत अपराध (जैसा कि अपील @ एस.एल.पी. (आप.) क्रमांक 9859/2013) सहित धारा 25 और 27 आयुध अधिनियम (जैसा कि अपील @ एस.एल.पी. (आप.) क्रमांक 9860/2013), के शमन का प्रश्न आता है, बिना किसी कल्पना के, क्या इसे निजी पक्षकारों के बीच एक समान्य अपराध माना जा सकता है। यह महसूस किया गया है कि ऐसे अपराधों का समाज पर बड़े पैमाने पर गंभीर प्रभाव पड़ेगा। आगे यह भी महसूस किया गया है कि जहां अभियुक्तगण धारा 307, 294 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के साथ-साथ आयुध अधिनियम की धारा 25 और 27 के अंतर्गत विचारण का सामना कर रहे हो चूंकि अपराध निश्चित रूप से समाज के विरुद्ध है, अभियुक्तों को आवश्यक रूप से विचारण का सामना करना पड़ेगा और अपनी पूरी बेगुनाही साबित करके बाहर आना होगा।

9.6 दीपक (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय ने विशेष रूप से महसूस किया कि धारा 307 भा.द.सं. के तहत अशमनीय अपराध है और धारा 307 के तहत अपराध पक्षकारों के बीच परस्पर एक निजी विवाद नहीं है किंतु समाज के विरुद्ध एक अपराध है, एक समझौते के

आधार पर कार्यवाही को रद्द करना अनुज्ञेय नहीं है। इसी प्रकार इस न्यायालय ने वर्तमान में कल्याण सिंह (उपरोक्त) और ध्रुव गुर्जर (उपरोक्त) के मामले के निर्णय में यह राय दी है।

10. अब जहां तक नरिन्दर सिंह (उपरोक्त) के मामले का इस न्यायालय के निर्णय से संबंध है, इस न्यायालय ने पैराग्राफ 29.6 में स्वीकार किया है कि धारा 307 भा.द.सं. के तहत किया गया अपराध जघन्य और गंभीर अपराधों की श्रेणी में आएगा और इसलिये इन्हें समान्यतः समाज के विरुद्ध अपराध की तरह माना जाता है न कि अकेले व्यक्ति के विरुद्ध। यद्यपि, इस न्यायालय ने आगे अवलोकन किया कि उच्च न्यायालय अपने निर्णय को केवल इसलिए बहाल नहीं करेगा क्योंकि एफ.आई.आर. में धारा 307 का उल्लेख है या अन्य आरोप लगाया गया है। इसके आगे चिकित्सीय साक्ष्य या अन्य साक्ष्य के साथ सम्पोषण को देखा जाना, जो केवल परीक्षण के दौरान संभव है। नरिन्दर सिंह के मामले का निर्णय इस न्यायालय के वर्तमान निर्णय में अभियुक्तों के लिए कोई सहायक नहीं होगा।

11. अब जहां तक इस न्यायालय के शिजी (उपरोक्त) के मामले के निर्णय पर भरोसा करते हुए, एफ.आई.आर. को रद्द करते समय यह महसूस करते हुए कि फरियादी ने अभियुक्त के साथ समझौता किया है, वह दोषसिद्धि दर्ज करने की कोई संभावना नहीं है, और/या आगे का विचारण करने की प्रक्रिया निरर्थकता से संबंधित होगी, हमारी राय यह है कि उच्च न्यायालय ने उपरोक्त वर्णित आधार पर एफ.आई.आर. को रद्द करने में स्पष्ट रूप से भूल की हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने इस मामलों के तथ्यों पर कथित निर्णय को गलत तरीके से पढ़ा या गलत तरीके से लागू किया है। उच्च न्यायालय को इस बात की सराहना करना चाहिए की प्रत्येक मामले में जहां फरियादी ने आरोपी के साथ समझौता कर लिया है, वहां कोई दोषी नहीं हो सकता है। ऐसे अवलोकन काल्पनिक है और कई बार राय देना जल्दबाजी है। वर्तमान प्रकरण में यह हो सकता है कि अभियोजन अभी भी ठोस साक्ष्य और अन्य गवाहों का परीक्षण कराकर दोषसिद्ध कर सकता है और सुसंगत साक्ष्य/वस्तु, अधिक विशेष रूप से जब विवाद एक वाणिज्यिक लेनदेन का नहीं है, और/या दीवानी प्रकृति, और/या एक निजी दोष नहीं है। शिजी (उपरोक्त) मामले में इस न्यायालय ने यह पाया कि मामले की उत्पत्ति पक्षकारों के मध्य दीवानी विवाद से हुई थी, जो विवाद उनके द्वारा हल कर लिया गया और इसलिए इस न्यायालय ने कहा कि, "ऐसा होना, अभियोजन की निरंतरता, जहां फरियादी आरोपी का समर्थन करने के लिए तैयार नहीं है..... एक निरर्थक अभ्यास होगा जो किसी उद्देश्य की पूर्ति नहीं करेगा। उपरोक्त वर्णित मामले में यह भी महसूस किया गया 'कि यद्यपि दोनों कथित

चश्मदीद गवाह फरियादी से निकट संबंधित थे हांलाकि वे अभियोजन संस्करण का समर्थन नहीं कर रहे थे' और इस न्यायालय ने महसूस और अभिनिर्धारित किया, 'कार्यवाहियों की निरंतरता एक खाली औपचारिकता के अलावा और कुछ नहीं है और द.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत ऐसी परिस्थितियों में उच्च न्यायालय द्वारा उचित रूप से न्याय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए और जिसके द्वारा अधीनस्थ न्यायालयों की फिजूल प्रक्रिया को रोकने के लिए किया जा सकता है। उक्त निर्णय के पैराग्राफ 18 में निम्नलिखित रूप से यहा तक महसूस किया है :

“18. ऐसा कहने के बाद, हमें यह शीघ्रता से जोड़ना चाहिए कि द.प्र.सं. की धारा 482 के तहत अपने आप में प्रचुर शक्तियां हैं, यह उच्च न्यायालय के लिए अंत्यत सावधानी और सतर्कता के साथ प्रयोग करने के लिए बाध्यकर बनाती है। शक्ति की विस्तृतता और प्रकृति स्वयं यह मांग करती है कि उच्च न्यायालय को इनका प्रयोग केवल अल्प रूप से और उन मामलों में करना चाहिए जिनके कारणों को लेखबद्ध कर इस स्पष्ट मत पर हो की अभियोजन की निरंतरता कानून की प्रक्रिया का एक दुरुपयोग मात्र के अलावा कुछ नहीं होगा। न तो यह हमारे लिए आवश्यक है और न ही उपयुक्त है कि उन स्थितियों का उल्लेख करें जिनमें धारा 482 के तहत शक्ति का प्रयोग न्यायोचित हो सकता है। कुल मिलाकर हमें यह कहने की आवश्यकता है कि शक्ति का प्रयोग न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए होना चाहिए और केवल उन मामलों में जहां उस शक्ति का प्रयोग करने के इनकार से विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग होने का परिणाम हो सकता है। उच्च न्यायालय को हस्तक्षेप में इनकार करने को न्यायोचित ठहराया जा सकता है यदि उसे साक्ष्य के मूल्यांकन के लिए कहा जाये तो वह धारा 482 द.प्र.सं. के तहत याचिका से निपटने के दौरान एक अपीलीय न्यायालय की भूमिका ग्रहण नहीं कर सकता है उपरोक्त के अधीन, उच्च न्यायालय को यह ज्ञात करने के लिए प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करना होगा, क्या यह एक उचित मामला है जिसमें अंतर्निहित शक्तियों को लागू किया जा सकता है।”

11.1 इसलिए उपरोक्त निर्णय ऐसे मामले में लागू हो सकता है जिसका मूल पक्षकारों के बीच सिविल विवाद है; पक्षकारों ने विवाद को सुलझा लिया है; कि अपराध व्यापक रूप से समाज के विरुद्ध नहीं है और/या उसी का सामाजिक प्रभाव नहीं हो सकता है; विवाद एक परिवार/वैवाहिक विवाद आदि है। पूर्वोक्त निर्णय उन मामलों में लागू नहीं हो सकता है जिनमें

अभिकथित अपराध बहुत गंभीर और घोर अपराध है, जिनके धारा 307 भा.द.सं. के तहत अपराध जैसे सामाजिक प्रभाव होते हैं। इसलिए सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर उचित विचार किये बिना हमारे विचार में उच्च न्यायालय ने एफ.आई.आर. को यांत्रिक रूप से रद्द करने में तात्त्विक त्रुटि की है, यह अवलोकन करते हुए कि समझौते को ध्यान में रखते हुए, दोषसिद्धि अभिलिखित करने की कोई संभावना नहीं है और/या आगे का विचारण निरर्थता का एक प्रयोग होगा। उच्च न्यायालय ने शिजी (उपरोक्त) के मामले में, मामले के सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार किये बिना इस न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णय पर यांत्रिक रूप से विचार किया है।

12. अब जहां तक नरिन्दर सिंह (उपरोक्त) और शम्भू केवट के निर्णयों के बीच पारस्परिक विरोध का सम्बन्ध है, शम्भू केवट (उपरोक्त) के प्रकरण में इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय को धारा 482 द.प्र.सं. द्वारा प्रदत्त आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करने की शक्ति और न्यायालय को धारा 320 द.प्र.सं. के अंतर्गत अपराधों का शमन करने की प्रदत्त शक्ति से भिन्न है। उक्त निर्णय में, इस न्यायालय ने आगे अवलोकन किया कि अपराधों के शमन में, न्यायालय की शक्ति धारा 320 द.प्र.सं. के प्रावधानों द्वारा परिचालित होती है और न्यायालय को पूरी तरह से और स्पष्ट रूप से निर्देशित किया जाता है। जबकि, दूसरी ओर धारा 482 द.प्र.सं. के तहत आपराधिक परिवाद या आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा राय दिया जाना, अभिलेख सामाग्री द्वारा निर्देशित किया जाता है कि क्या ऐसी शक्ति के प्रयोग से न्याय के उद्देश्य की पूर्ति होगी, यद्यपि अंतिम परिणाम दोषमुक्ति या अभियोग का खारिज होना हो सकता है। यद्यपि, नरिन्दर सिंह (उपरोक्त) के पश्चातवर्ती निर्णय में, इसी पीठ ने पैरा 29 में अंतिम रूप से जैसा कि नीचे निष्कर्ष निकाला :-

“29 . उपरोक्त चर्चा को दृष्टिगत रखते हुए, हम सरांशता और निम्नलिखित सिद्धांतों को प्रतिपादित करते हैं जिसके द्वारा उच्च न्यायालय को मार्गदर्शित किया जाएगा पक्षकारों के मध्य हुए समझौते को उचित उपचार देने में और धारा 482 द.प्र.सं. के अंतर्गत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए कार्यवाही को रद्द करते हुए और समझौते को स्वीकार करते हुए या समझौते को मानने से इनकार करते हुए आपराधिक कार्यवाहियों के जारी रहने का निर्देश देगा।

29.1. द.प्र.सं. की धारा 482 के तहत प्रदत्त शक्ति को उस शक्ति से अलग किया जाना चाहिए जो न्यायालय को संहिता की धारा 320 के अंतर्गत अपराधों के शमन

करने के लिए दी जाती है। निसंदेह संहिता की धारा 482 के अंतर्गत उच्च न्यायालय को उन मामलों में भी आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करने की अंतर्निहित शक्ति है जो शमनीय नहीं हैं, जहां पक्षकारों ने आपस में मामला सुलझा लिया है। हालांकि, इस शक्ति का प्रयोग संयम से और सावधानी के साथ किया जाना है।

29.2. जब पक्षकार निपटारे पर पहुंच गए हैं और उस आधार पर आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए याचिका दायर की जाती है, तो ऐसे मामलों में मार्गदर्शक कारक (i) न्याय के उद्देश्य की पूर्ति के लिए या (ii) किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोकने के लिए को सुरक्षित करना होगा।

उच्च न्यायालय को अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय पूर्वोक्त दो उद्देश्यों में से किसी एक पर राय बनानी होती है।

29.3. ऐसी शक्ति का उन अभियोगों में प्रयोग नहीं किया जाना है जिनमें जघन्य और मानसिक अवसाद के गंभीर अपराध या अपराध जैसे हत्या, बलात्कार, डकैती इत्यादि शामिल हैं। ऐसे अपराध निजी प्रकृति के नहीं हैं और समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं। इसी प्रकार विशेष कानून के तहत कारित किये गए अभिकथित अपराध जैसे कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम या उस क्षमता में काम करते समय लोक सेवकों द्वारा किए गए अपराध मात्र इस आधार पर रद्द नहीं किये जाने हैं कि पीड़ित और अपराधी के बीच कोई समझौता हो गया है।

29.4. दूसरी तरफ, उन आपराधिक मामलों में जो बड़े पैमाने पर और पूर्वव्यापी दीवानी प्रकृति के होते हैं, विशेष रूप से वे जो वाणिज्यिक संव्यवहार से उत्पन्न होते हैं या वैवाहिक संबंध से उत्पन्न होते हैं, या पारिवारिक विवादों को समाप्त किया जाना चाहिए, जब पक्षकारों ने अपने विवाद को आपस में खुद से हल कर लिया हो।

29.5. अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को इस बात की जांच करनी है कि क्या दोषसिद्धि की संभावना दूरस्थ और धूमिल है और आपराधिक मामलों की निरंतरता अभियुक्तों को बहुत उत्पीड़न और पक्षपात में डालेगी और आपराधिक मामलों को समाप्त नहीं करने से उसके साथ अत्यधिक अन्याय होगा।

29.6. भा.द.सं. की धारा 307 के तहत अपराध जघन्य और गंभीर अपराधों की श्रेणी में आयेगें और इसलिए इन्हें आमतौर पर समाज के विरुद्ध अपराध माना जाता है और न कि केवल अकेले व्यक्ति के विरुद्ध। हालांकि उच्च न्यायालय अपने निर्णय को केवल

इसलिए बहाल नहीं करेगा क्योंकि एफ.आई.आर. में धारा 307 भा.द.सं. का उल्लेख है या इस प्रावधान के तहत आरोप तय किया गया है। उच्च न्यायालय को यह परीक्षण करने के लिए खुला रहेगा कि क्या धारा 307 भा.द.सं. को मात्र इसमें शामिल करने के लिए या अभियोजन पक्ष ने पर्याप्त साक्ष्य एकत्र किये हैं, जो यदि साबित हुआ, को धारा 307 भा.द.सं. के तहत आरोप साबित करने के लिए प्रेरित करेगा। इस प्रयोजन के लिए, उच्च न्यायालय को यह खुला रहेगा, चोट लगने की प्रकृति के साथ जाए क्या इस तरह की चोट शरीर के महत्वपूर्ण/प्रतिनिधि भागों पर कारित की गई है, हथियारों की प्रकृति जो इस्तेमाल किये गये हैं, पीड़ित को कारित चोटों के संबंध में चिकित्सीय रिपोर्ट सामान्यतः मार्गदर्शक कारक हो सकते हैं। इस प्रथम दृष्ट्या विश्लेषण के आधार पर, उच्च न्यायालय इस बात की जांच कर सकता है कि क्या दोषी ठहराए जाने की प्रबल संभावना है या दोषी ठहराए जाने की संभावनाएँ दुरस्थ और धूमिल हैं। पूर्व मामले में यह निपटारे को स्वीकार करने से इनकार कर सकता है और आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द कर सकता है जबकि बाद के मामले में उच्च न्यायालय के लिए पक्षकारों के बीच पूर्ण निपटारा अभिवाक् समझौते पर आधारित अपराध को स्वीकार करने के लिए यह स्वीकार्य होगा। इस स्तर पर, न्यायालय को इस तथ्य से भी प्रभावित किया जा सकता है कि पक्षकारों के बीच समझौता करने से उनके बीच सदभाव हो सकता है जिससे उनके भविष्य के रिश्ते में सुधार हो सकता है।

29.7. संहिता की धारा 482 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करना है या नहीं, यह तय करते समय निपटारे की समय-सीमा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जिन मामलों का निपटारा कथित अपराध के तुरन्त बाद हो जाता है और मामला अन्वेषणाधीन है, उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाही/जांच को रद्द करने के लिए समझौता स्वीकार करने में उदार हो सकता है। यह इस कारण से है कि इस स्तर पर जांच अभी भी जारी है और यहां तक की चार्जशीट भी पेश नहीं की गई है। इसी तरह, उन मामलों में जहां आरोप लगाया गया है लेकिन साक्ष्य को शुरू करना अभी बाकी है या साक्ष्य अभी भी प्रारंभिक अवस्था में है, उच्च न्यायालय अपनी शक्तियों को अनुकूल तरीके से उपयोग करने में उदारता दिखा सकता है, लेकिन ऊपर उल्लेखित परिस्थितियों/सामग्री का प्रथम दृष्ट्या मूल्यांकन करने के बाद। दूसरी ओर, जहां अभियोजन साक्ष्य लगभग पूर्ण हैं या प्रकरण साक्ष्य के निष्कर्ष के बाद तर्क की अवस्था

पर है, आमतौर पर उच्च न्यायालय को संहिता की धारा 482 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने से बचना चाहिए, जैसा कि ऐसे मामलों में विचारण न्यायालय मामले को गुणागूण पर निर्णित करने की स्थिति में होगा और इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि क्या धारा 307 के तहत अपराध किया गया है या नहीं। इसी तरह, उन मामलों में जहां दोषसिद्धि विचारण न्यायालय द्वारा पहले से ही दर्ज की जाती है और मामला उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की अवस्था पर है, केवल पक्षकारों के बीच समझौता एक ही आधार को स्वीकार करने का आधार नहीं होगा जिसके परिणाम स्वरूप अपराधी को दोषमुक्त किया जायेगा जो कि विचारण न्यायालय द्वारा पहले से ही दोषसिद्ध किया गया है। यहां धारा 307 भा.द.सं. के तहत आरोप साबित हो जाता है और दोषसिद्धि पहले से ही जघन्य अपराध के रूप में दर्ज की जाती है और इसलिए, इस तरह के अपराध के लिए दोषी पाए गए अपराधी को बख्शने का कोई सवाल ही नहीं है।

13. विधि के बिंदु पर और इस न्यायालय के अन्य निर्णयों के बिंदुओं पर विचार करते हुए, उपरोक्त वर्णित से संबंधित, नीचे यह अवलोकन और अभिनिर्धारित किया गया है :

(i) कि संहिता की धारा 320 के अंतर्गत अशमनीय अपराधों के लिए संहिता की धारा 482 के अंतर्गत आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करने की प्रदत्त शक्ति का प्रयोग दीवानी स्वरूप के मामलों में जोरदार तरीके से और प्रबलता से किया जा सकता है, विशेषकर उनमें जो वित्तीय संव्यवहार से उत्पन्न हो या वैवाहिक संबंधों से उत्पन्न हो या पारिवारिक विवादों से उत्पन्न हो और जब पक्षकारों ने सम्पूर्ण विवाद आपस में सुलझा लिया है;

(ii) ऐसी शक्ति का प्रयोग उन अभियोगों में नहीं किया जाता है जिनमें जघन्य और मानसिक भ्रष्टता के गंभीर अपराध शामिल हैं या अपराध जैसे हत्या, बलात्कार, डकैती आदि। ऐसे अपराध निजी प्रकृति के नहीं हैं और समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं;

(iii) इसी तरह से, ऐसी शक्ति का प्रयोग भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम जैसे विशेष कानून के अंतर्गत अपराधों में नहीं किया जाना चाहिए या लोक सेवक द्वारा अपने पदीय हैसियत में कोई अपराध किये जाने पर केवल इस आधार पर कि पीड़ित और अपराधी ने समझौता कर लिया है, रद्द नहीं किया जाना चाहिए;

(iv) धारा 307 भा.द.सं. और आयुध अधिनियम आदि के अंतर्गत अपराध जघन्य और गंभीर अपराधों की श्रेणी में आएंगे और इसलिए इन्हें समाज के विरुद्ध अपराधों की तरह माना जाता है और न केवल किसी अकेले व्यक्ति के विरुद्ध, और इसलिए, धारा 307 भा.द.सं. के अंतर्गत आपराधिक कार्यवाहियों और/या आयुध अधिनियम आदि जो समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं, को संहिता की धारा 482 के तहत शक्ति के प्रयोग में रद्द नहीं किया जा सकता है, इस आधार पर कि पक्षकारों ने अपने सम्पूर्ण विवाद को पारस्परिक सुलझा लिया है। यद्यपि, उच्च न्यायालय अपने निर्णय को मात्र इस कारण से बहाल नहीं करेगा कि एफ.आई.आर. में धारा 307 भा.द.सं. का उल्लेख है या इस प्रावधान के अंतर्गत आरोप विरचित किया जाता है। उच्च न्यायालय के लिए यह परीक्षण करना खुला होगा कि कहने मात्र के लिए धारा 307 भा.द.सं. को शामिल करे या अभियोजन ने पर्याप्त साक्ष्य एकत्रित कर लिया है, जो यदि साबित होता है, तो धारा 307 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरचित करने को अग्रसर होंगे। इस प्रयोजन के लिए, उच्च न्यायालय के लिए कारित चोट की प्रकृति पर जाना खुला होगा, क्या ऐसी चोट शरीर के नाजुक/मुख्य भाग पर पहुंचाई गई है। हथियारों की प्रकृति से जो उपयोग किये गये हैं आदि। हालांकि उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा प्रयोग करना केवल तब अनुज्ञेय होगा जब अन्वेषण के उपरान्त साक्ष्य एकत्रित कर लिए जाते हैं और आरोप पत्र दायर कर दिया जाता है/आरोप विरचित कर दिया जाता है और/या विचारण के दौरान। ऐसा प्रयोग अनुज्ञेय नहीं है जब मामला अन्वेषण के अधीन है। इसलिए, इस न्यायालय के नरिन्दर सिंह (उपरोक्त) के मामले के पैरा 29.6 और 29.7 के अंतिम निष्कर्ष को सामंजस्यपूर्ण पढ़ा जाना चाहिए और सम्पूर्ण की तरह पढ़ा जाए और ऐसी परिस्थितियों में जो ऊपर वर्णित हैं;

(v) अशमनीय अपराधों के संबंध में आपराधिक कार्यवाहियों को समाप्त करने की संहिता की धारा 482 के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय, जो निजी प्रकृति की है और जिसका समाज पर गंभीर प्रभाव नहीं पड़ता है, इस आधार पर कि पीड़ित और अपराधी के बीच निपटारा/ समझौता हो गया है, उच्च न्यायालय को अभियुक्त के पूर्वपद पर विचार करना आवश्यक है; अभियुक्त का आचरण, अर्थात्, क्या अभियुक्त

फरार था और वह फरार क्यों था, उसने फरियादी को समझौता आदि करने के लिए कैसे तैयार किया था।

14. जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है, उच्च न्यायालय ने धारा 307 और 34 भा.द.सं. के अपराध की आपराधिक कार्यवाहियों को यांत्रिक रूप से रद्द कर दिया है और वो भी जब अन्वेषण जारी था। किसी न किसी तरह, अभियुक्त ने फरियादी को समझौता करने के लिए तैयार किया और निपटारे के आधार पर एफ.आई.आर. का रद्द करने प्रार्थना की। आरोप प्रकृति में गंभीर है। उसने इस अपराध को करने में अग्नेयशस्त्र का भी उपयोग किया है। इसलिए, अपराध की गंभीरता और अभियुक्त के आचरण पर उच्च न्यायालय ने बिल्कुल भी विचार नहीं किया है और केवल अभियुक्त और फरियादी के बीच समझौते के आधार पर उच्च न्यायालय ने धारा 482 द.प्र.सं. के तहत शक्ति के प्रयोग में एफ.आई.आर. को यांत्रिक रूप से रद्द कर दिया है, जो कि विधि की दृष्टि में धारणीय नहीं है। उच्च न्यायालय अभियुक्त के पूर्वपद को भी टीप करने में असफल रहा।

15. उक्त दृष्टिकोण और बताए हुए कारणों को देखते हुए, वर्तमान अपील को स्वीकार किया जाता है। इस तरह विविध आपराधिक प्रकरण क्र० 800/2013 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आलोच्य निर्णय और आदेश दिनांकित 07.10.2013 रद्द और अपास्त किया जाता है, और अभियुक्त के विरुद्ध एफ.आई.आर./अन्वेषण/आपराधिक कार्यवाहियां आगे बढ़ाई जाये, और वे विधि के अनुसार निपटाये जाएंगे।

आपराधिक अपील क्र० 350/2019

16. जहां तक एस.एल.पी. 10324/2018 से उत्पन्न आपराधिक अपील का संबंध है, आलोच्य निर्णय और आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने धारा 323,294,308 और 34 भा.द.सं. के तहत दण्डनीय अपराध की आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द कर दिया केवल इस आधार पर कि अभियुक्त और फरियादी ने मामले में निपटारा कर लिया है और इस न्यायालय के शिजी (उपरोक्त) के मामले को देखते हुए, अभियुक्त के विरुद्ध दोषसिद्धि अभिलिखित करने की कोई संभावना नहीं हो सकती। धारा 308 भा.द.सं. के तहत अपराध अशमनीय है। अपराध करते समय, अभियुक्त ने अग्नेयशस्त्र का उपयोग किया है। वे भी फरार है, और इस बीच, फरियादी को समझौता करने के लिए तैयार कर लिया है। इसलिए उक्त बताए गए कारणों के लिए यह अपील स्वीकार की जाती है, इस तरह विविध आपराधिक प्रकरण क्र० 19309/2018 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आलोच्य निर्णय और आदेश दिनांकित 28.05.2018 रद्द और अपास्त

किया जाता है, और अभियुक्त के विरुद्ध एफ.आई.आर./अन्वेषण/आपराधिक कार्यवाहियां आगे बढ़ाई जाये, और वे विधि के अनुसार निपटाये जाएंगे।

.....न्यायमूर्ति

(ए.के. सीकरी)

.....न्यायमूर्ति

(एस.अब्दुल नजीर)

नई दिल्ली;

.....न्यायमूर्ति

मार्च 05, 2019

(एम.आर. शाह)

:: खंडन ::

क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय से आशय केवल पक्षकारों को उनकी अपनी भाषा में समझने के लिये है एवं इसका प्रयोग किसी अन्य उद्देश्य के लिये नहीं किया जा सकेगा। सभी व्यावहारिक एवं कार्यालयीन उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणित होगा और निष्पादन तथा क्रियान्वयन के उद्देश्य के लिये प्रभावी माना जावेगा।